REVIEW OF RESEARCH

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 3.8014 (UIF)
VOLUME - 6 | ISSUE - 10 | JULY - 2017

हिंदी एवं मराठी बाल कहानी-साहित्य में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता

डॉ. अमोल विठ्ठल पालकर
स्नातक एवं स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
बलभीम महाविद्यालय,बीड .

प्रस्तावना :

हिंदी में मौलिक बालसाहित्य लेखन की शुरूआत वास्तव में बीसवी शताब्दी के आरंभ में हुई। सन् 1914 में विद्यार्थी, 1915 में शिशु और 1917 में बालसखा साहित्य पत्रिकाएँ आरंभ हुई। इनमें मैथिलीशरण गुप्त, कामता प्रसाद गुरू, डॉ. महेंद्र गर्ग, चंद्रमौलि शुक्ल आदि प्रमुख एवं श्रेष्ठ रचनाकारों ने रचनाएँ लिखी है। वैसे देखा जाए तो मौलिक बाल साहित्य अंग्रेजी बालसाहित्य के प्रभाव स्वरूप ही हिंदी में आया है। उसके पूर्व अनूदित बाल साहित्य हिंदी में आ चुका था।

आजादी के बाद बालसाहित्य में परिवर्तन आ रहा है। बच्चों का बचपन भी इससे प्रभावित हो चुका है। समाज, परिवेश और समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर वे विकसित हो रहे हैं। इसलिए बालसाहित्य रचनाकार को इन सब का ध्यान रखकर साहित्य निर्मिति करना आवश्यक है। बदलते युग की मानसिकता को लेखक ने ध्यान में रखना आवश्यक है। इसके विपरित अगर लेखन हुआ तो बालकों के लिए उसका उपयोग नहीं होगा। साथ ही बालक भी उसका स्वीकार नहीं करेंगे।

बाल कहानी-साहित्य में बच्चों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता निर्माण कर पर्यावरण संरक्षण करने के लिए प्रेरणापरक कई कहानियों का सृजन किया गया है जो न सिर्फ बच्चों के लिए बल्कि प्रकृति के स्वास्थपूर्ण एवं उज्वल भविष्य के लिए भी महत्वपूर्ण है। हिंदी बाल कहानी-साहित्य में डॉ. उषा पुरी की `तुलसी चौरा` कहानी में तुलसी के गुण तथा पर्यावरण संतुलन के लिए उसका महत्व किस प्रकार है इस बात को पाठकों के सामने लाया गया है। कहानी की ग्राम सेविका पर्यावरण की दृष्टि से तुलसी का महत्व स्पष्ट करते हुए लोगों से कहती है- ``तुलसी वायु और जल दोनों को साफ करती है। तुलसी में एक उड़नशील तेल होता है जो हवा में मिलकर ज्वर उत्पन्न करनेवाले मलेरिया के कीटाणुओं को नष्ट कर देता है। तुलसी की सुगन्ध से वायु में दूर-दर तक मौजूद हानिकारक जन्तु नष्ट हो जाते हैं। घर के आंगन में तुलसी का पौधा भी इसलिए लगाते हैं। इससे घर में साफ हवा प्रवेश करती है। पानी में तुलसी के पत्ते डाल कर पिया जाता है। पत्ते डाल देने से पानी कई दिन तक खराब नहीं होता। वही पानी रोगी को भी पिलाया जा सकता है। है न पानी को शुध्द करने का अद्‌भूत तरीका।``[1] इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में तुलसी का पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से महत्व स्पष्ट किया है।

पंकज चतुर्वेदी की `बेर का पेड़` कहानी में पेडों के उपयोग तथा महत्व बताया है जिससे पेड़ लगाने की प्रेरणा मिलती है जो पर्यावरण दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रकृति का संतुलन पेड़ों से ही तो होता है अगर पेड़ ही नहीं रहेंगे तो पर्यावरण संतुलित नहीं रहेगा। इसी प्रकार शिवनारायण सिंह की `उपयोगिता अपनी-अपनी` कहानी में बबूल के पेड़ का महत्व स्पष्ट किया है। आम का पेड़ क्षमा माँगते हुए बबूल के पेड़ से कहता है- ``मित्र गर्ववश मैंने तुम्हारा अपमान किया था। पर आज मेरा सिर शर्म से झुक गया है। कँटीले होते हुए भी तुम इतने उपयोगी हो सकते हो, यह मैंने न जाना था। मैं तो किसी के दाँतों को दर्द दे सकता हूँ। मगर दर्द की दवा तो तुम्हारे ही पास है। अब से मैं कभी तुम्हारे मन को चोट पहुँचाने वाली बात न कहूँगा।``[2] इस प्रकार यहाँ पर बबूल के पेड़ का महत्व बताया है गया है जिससे पेड़ो का संरक्षण करने की सीख मिलती है। पेड़ बचेंगे तो निश्चित ही पर्यावरण संरक्षण तथा संतुलन रहेगा।

मराठी बाल कहानी-साहित्य में भी बच्चों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता निर्माण करने का प्रयत्न किया गया है। सरोज चौगुले की `हरी कुंभाराचा झाडू` कहानी में दादी माँ `हरी कुंभार` की कहानी बताकर साफ-सफाई का महत्व बताती है। दादी माँ की हरी कुम्हार की कहानी में हरी बच्चों से कहता है- ``मुलांनों, आपण रोज गावातले रस्ते स्वच्छ करतो; पण लोक पुन्हा रस्ते घाण करतात. आपण तुमच्या अंगणातले उकिरडे उपसतो; पण तुमच्या आया पुन्हा कचऱ्याचे ढीग टाकतात. घरापुढची डबकी भरून काढली तर पुन्हा पाणी टाकून दलदल करतात. त्यामुळे डास, चिलटं, माशा वाढून आजारपण येतं हे त्या समजूनच घेत नाहीत. त्यावर मी एक उपाय योजलाय. तुम्हाला प्रत्येकाला मी एक झाडू देता तो आयांना नेऊन दया. त्यांनी तो हातात घेतला की आपोआप स्वच्छता करतील.``[3] इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में स्वच्छता का महत्व बताकर पर्यावरण संरक्षण तथा संतुलन की सीख दी गयी है।

राजा मंगळवेढेकर की `सुरस` कहानी में सुरस नामक युवक जिसने झेलम नदी की बाड़ को रोककर जगह-जगह पर बांध का निर्माण किया जिससे काश्मीर पर आया संकट दूर हुआ। सुरस बाड़ के संदर्भ में लोगों से कहता है- ``पाणी उतरले, पूर कमी झाला, पण काम संपलेले नाही. दरवर्षी पुराने होणारे नुकसान आपण कसे सोसणार? आपण सगळे जण जर असेच मिळून झटू तर पुराचे संकट कायमचे निपटून टाकू. सुखाने राहू.``[4] अर्थात् यहाँ पर प्राकृतिक आपदा से बचने के लिए किसप्रकार व्यवस्थापन करना चाहिए यह सीख मिलती है।

साथ ही मराठी बाल कहानी- साहित्य में और कई कहानियाँ है जिनमें बच्चों के मन में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता निर्माण करने का प्रयास किया गया है। जैसे कि श्याम कुरळे की जलाश्य आणि नाला, दुर्गा भागवत की बोलणारा खेकडा, आदि।

इस प्रकार हिंदी और मराठी बाल-कहानी साहित्य में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता निर्माण करने की कोशिश की गयी है जो बच्चें तथा प्रकृति के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण है। साथ ही इस विषय पर और अधिक जोर देकर इस विषय की कहानियों की मात्रा में वृध्दि करने की आवश्यकता है जो इस आधुनिक दौर में वैश्विक चुनौतियों का समाधान ढूँढ सकें।

हिंदी और मराठी बाल कहानी-साहित्य बालकों के भविष्य के प्रति सजग है। यह साहित्य बच्चों में शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोन निर्माण कर देता है। आलसी वृत्ति के दुष्परिणाम बताकर मेहनत, प्रामाणिकता, ईमानदारी, नि:स्वार्थी वृत्ति, समय सूचकता एवं संगठन पर जोर देकर गुणों का महत्व स्पष्ट करता है। साथ ही गलतियों को स्वीकार करने की ताकद देकर पश्चाताप करने की सीख देता है इतना ही नहीं तो माता-पिता, अतिथि की सेवा तथा आदर कर मधुर वाणी तथा सदाचरण की सीख देता है।

बदलते हुए जमाने में मनोरंजन के साधन भी बदल रहे हैं। टेलिविजन, कम्प्यूटर, लैप-टॉप, मोबाईल और उस पर के विभिन्न ॲप्स, इंटरनेट बच्चों को आकर्षित कर रहे हैं, वीडियों और फिल्मों के माध्यम से कहानी जब पर्दे पर आ रही है तब वह कहानी कहाँ पढ़ी जाएगी इस पर सवाल उठ रहें हैं ऐसे में विशेषज्ञों का मानना है कि बच्चें पुस्तकें भी बड़ी संख्या में पढ़ रहे हैं। जैसे टेलिविजन के आने पर रेडियो समाप्त नहीं हुआ वैसे इलेक्ट्रॉनिक्स माध्यमों में पुस्तकें भी खत्म नहीं होंगी। अत: बालसाहित्य और उसका महत्व आज है और भविष्य में भी रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूचि

1. डॉ.उषा पुरी, तुलसी चौरा, महावीर प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2004, पृ.10
2. शिवनारायण सिंह, मेहनती चींटी, हिमाचल पुस्तक भंडार, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृ.5
3. सरोज चौगुले, अदभुत जादुईनगरी, पृ.54-55
4. संपा.बाबा भांड, श्रेष्ठ भारतीय बाल कथा, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद, आठवाँ संस्करण,2013, पृ.493